डॉ. बिभा कुमारी

हिंदी विभाग, विश्वेश्वर सिंह जनता महाविद्यालय राजनगर, मधुबनी

ललित नारायण मिथिला विश्वविद्यालय, दरभंगा

स्नातक हिंदी प्रतिष्ठा, प्रथम वर्ष, प्रथम पत्र तथा स्नातक प्रथम खण्ड वैकल्पिक या ऐच्छिक / सामान्य हिंदी

हिंदी साहित्य के इतिहास में काल विभाजन और नामकरण

साहित्य के इतिहास – लेखन हेतु साहित्यिक विकास के वर्गीकरण की दो पद्धतियाँ प्रमुख रूप से अपनाई जा सकती हैं – साहित्यिक विकास का युगपरक वर्गीकरण तथा साहित्यिक विकास का स्वरूपगत वर्गीकरण।

युगपरक वर्गीकरण विभिन्न युगों की परिस्थितियों और प्रवृतियों को ध्यान में रखकर किया जाता है, इसका कारण यह है कि प्रत्येक युग की सामाजिक चेतना और साहित्यिक प्रवृतियों में बहुत गहरा संबंध होता है। हिंदी साहित्य के इतिहासकारों ने युगपरक पद्धति को अपनाकर हिंदी साहित्य के इतिहास को आदिकाल, भक्तिकाल, रीतिकाल आदि खंडों में विभाजित किया है। साहित्यिक विकास का स्वरूपगत वर्गीकरण साहित्य की आकृति और प्रकृति के आधार पर किया जा सकता है। आकृति के आधार पर विधागत वर्गीकरण होता है। जैसे हिंदी कविता के विकास को महाकाव्य, खंडकाव्य, मुक्तक काव्य इत्यादि रूप में विभाजित करके हिंदी कविता का इतिहास आरंभ से लेकर अभी तक लिखा जा सकता है। ठीक इसी प्रकार से गद्य के विकास को जीवनी, निबंध, कहानी, उपन्यास आदि विधाओं में विभाजित करके उसकी सम्पूर्ण विकास – यात्रा का अध्ययन किया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार साहित्य की प्रकृति को विविध प्रवृतियों के विकास की सूचक धाराओं में वर्गीकृत किया जा सकता है। उदाहरण स्वरूप रामभक्ति धारा, कृष्णभक्ति धारा, प्रेमाख्यान काव्य परंपरा, संतकाव्य धारा, वीरकाव्य धारा, श्रृंगारकाव्य धारा, राष्ट्रीय काव्यधारा इत्यादि को लेकर सम्पूर्ण हिंदी साहित्य का प्रवृतिपरक इतिहास लिखा जा सकता है। अभी हिंदी साहित्य के इतिहासकारों की दृष्टि प्रवृतिपरक इतिहास लेखन की ओर नहीं गयी है, किंतु कृष्ण – काव्य – परंपरा, हिंदी रहस्यवादी काव्यधारा, हिंदी सूफी काव्य, हिंदी वीर काव्य इत्यादि विषयों पर अनेक शोध – प्रबंध लिखे जा चुके हैं।

हिंदी साहित्य के काल – विभाजन की दिशा में सर जॉर्ज ग्रियर्सन तथा मिश्रबन्धुओं द्वारा प्रयत्न प्रारंभ हो चुके थे। आगे चलकर आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने काल – विभाजन और नामकरण को अधिक स्पष्ट और क्रमबद्ध रूप में प्रस्तुत किया। आगे चलकर अधिकांश विद्वानों ने आचार्य रामचंद्र शुक्ल के काल – विभाजन और विभिन्न कालों के नामकरण को ही प्रमुखता से स्वीकार किया है। आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने हिंदी साहित्य के आदिकाल को वीरगाथा काल नाम दिया और इसकी कालावधि संवत 1050 से लेकर संवत 1375 तक बताई। इन्होंने पूर्वमध्य काल को भक्तिकाल नाम दिया और इसकी कालावधि संवत 1375 से संवत 1700 तक बताई। उत्तर मध्यकाल को उन्होंने रीतिकाल नाम दिया और उसकी कालावधि संवत 1700 से संवत 1900 तक बताई। आधुनिक काल को उन्होंने गद्य – काल नाम दिया और इसकी कालावधि संवत 1900 से लेकर अबतक बताई। साहित्य सतत विकासशील होता है, अतः साहित्येतिहास लेखन के क्रम में किसी भी कालविभाजन और नामकरण को अंतिम नहीं कहा जा सकता है।

आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी ने हिंदी साहित्य के इतिहास को निम्नांकित काल – खंडों में विभाजित करते हुए इस प्रकार नामकरण किया है –

1000 से 1400 ई. - आदिकाल, 1400 से 1650 ई. – पूर्व मध्यकाल, 1650 ई. से 1850 ई. -उत्तर मध्यकाल, 1850 ई. से आज तक आधुनिक काल।

डॉ. गणपतिचंद्र गुप्त ने अपने वैज्ञानिक इतिहास में इस प्रकार कालविभाजन और नामकरण किया है –

सन् 1184 से 1350 ई. – प्रारंभिक काल, सन् 1350 से 1875 ई. – मध्यकाल

(क) 1350 से 1600 ई. – पूर्व मध्यकाल

(ख) 1600 से 1875 ई. – उत्तर मध्यकाल

सन् 1875 से आज तक आधुनिक काल माना है। अधिकांश विद्वानों ने आचार्य रामचंद्र शुक्ल के काल – विभाजन को माना है। जहाँ तक नामकरण की बात है तो आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने जिसे वीरगाथा काल कहा था, कालक्रम में उसकी अधिकांश वीरगाथाएँ अप्रमाणिक सिद्ध हो गईं। जैनों और सिद्धों की धार्मिक और श्रृंगारिक रचनाएँ प्रकाश में आ गईं, अतः वीरगाथा नाम तर्कसंगत नहीं रह गया। डॉ. ग्रियर्सन और डॉ. रामकुमार वर्मा ने इसे ' चारण काल' कहा था परंतु बाद में यह सिद्ध हो गया कि पृथ्वीराज रासो के रचनाकार चारण न होकर सिद्ध – सामंत थे। राहुल – सांकृत्यायन ने इस काल का नामकरण 'सिद्ध – सामंत – काल' कर दिया। सिद्धों का साहित्य इतना कम है कि उसके आधार पर इसकी पहचान नहीं हो सकी। इसी प्रकार 'सामंत' शब्द साहित्य की किसी प्रवृति का परिचायक नहीं है। मिश्रबन्धुओं का 'प्रारंभिक - काल' भी विद्वानों को उपयुक्त प्रतीत नहीं होता है। लगभग सभी विद्वानों ने एकमत से आचार्य हजारीप्रसाद द्विवेदी के नामकरण 'आदिकाल' को ही स्वीकार किया है।

उत्तर मध्यकाल को आचार्य रामचंद्र शुक्ल ने रीतिकाल नाम दिया। डॉ. रामकुमार वर्मा ने इस काल को 'कला – काल' कहा। आचार्य विश्वनाथ प्रसाद मिश्र ने इसे 'श्रृंगारकाल' कहा। आचार्य रामचंद्र शुक्ल द्वारा प्रदत्त नाम 'रीतिकाल' ही हिंदी साहित्य जगत में सर्वसम्मति से स्वीकृत हो गया।